



Kavya Setu

A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal

Impact Factor: 6.4

ISSN No: 3049-4176

भारत में नक्सलवाद के बदलते स्वरूप का अध्ययन - आदिवासी क्षेत्र, विकास और आंतरिक सुरक्षा के विशेष संदर्भ में

प्रा. राहुल दिलीप पाटील

झेड. बी. पाटील महाविद्यालय, धुले, (महाराष्ट्र - भारत)

सारांश

भारत में नक्सलवाद एक जटिल सामाजिक, राजनीतिक एवं आंतरिक सुरक्षा संबंधी समस्या के रूप में विकसित हुआ है। वर्ष 1967 में पश्चिम बंगाल के नक्सलबाड़ी से प्रारंभ हुए इस आंदोलन का विस्तार समय के साथ मध्य एवं पूर्वी भारत के आदिवासी तथा वन क्षेत्रों तक हुआ। भूमि-संबंधी असमानता, प्राकृतिक संसाधनों पर अधिकार, विस्थापन, प्रशासनिक उपेक्षा और सामाजिक-आर्थिक वंचना ने इसके विस्तार की परिस्थितियों को प्रभावित किया। दूसरी ओर, माओवादी संगठनों द्वारा अपनाई गई हिंसात्मक गतिविधियों ने स्थानीय नागरिकों, सुरक्षा बलों और विकासात्मक प्रक्रियाओं के सामने गंभीर चुनौतियाँ उत्पन्न कीं।

प्रस्तुत शोध-आलेख में नक्सलवाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, बदलते संगठनात्मक स्वरूप, आदिवासी क्षेत्रों की सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों, विकासात्मक नीतियों तथा भारत की आंतरिक सुरक्षा व्यवस्था का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन के लिए ऐतिहासिक, वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध-पद्धतियों का प्रयोग किया गया है। इसमें सरकारी प्रतिवेदनों, विधिक दस्तावेजों और प्रामाणिक अकादमिक अध्ययनों को आधार बनाया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2010 के बाद नक्सलवादी हिंसा के भौगोलिक विस्तार और घटनाओं की संख्या में उल्लेखनीय कमी आई है। जुलाई 2026 में केंद्र सरकार ने किसी भी जिले को नक्सल प्रभावित श्रेणी में न रखे जाने की जानकारी दी। तथापि, उसी वर्ष हिंसात्मक घटनाओं का दर्ज होना इस बात को रेखांकित करता है कि प्रशासनिक वर्गीकरण में परिवर्तन और हिंसा की पूर्ण समाप्ति अलग-अलग स्थितियाँ हैं।

बीज शब्द: नक्सलवाद, माओवाद, आदिवासी समुदाय, आंतरिक सुरक्षा, समावेशी विकास, वन अधिकार, विस्थापन, स्थानीय स्वशासन, पुनर्वास, सामाजिक न्याय।

प्रस्तावना

स्वतंत्र भारत में आर्थिक विकास, लोकतांत्रिक संस्थाओं के विस्तार तथा संवैधानिक अधिकारों की स्थापना के बावजूद सामाजिक-आर्थिक असमानताएँ एक महत्वपूर्ण चुनौती बनी रही हैं। विशेष रूप से आदिवासी और वन क्षेत्रों में भूमि का असमान स्वामित्व, संसाधनों तक सीमित पहुँच, शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी तथा प्रशासनिक प्रतिनिधित्व से संबंधित समस्याओं ने अनेक प्रकार के सामाजिक असंतोष को जन्म दिया है। नक्सलवादी आंदोलन की उत्पत्ति और विस्तार को इसी व्यापक ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में समझना आवश्यक है।



Kavya Setu

A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal

Impact Factor: 6.4

ISSN No: 3049-4176

वर्ष 1967 में पश्चिम बंगाल के नक्सलबाड़ी में हुए कृषक विद्रोह ने भारत में वामपंथी उग्रवाद के एक नए चरण की शुरुआत की। इस आंदोलन ने भूमि-संबंधी प्रश्नों और क्रांतिकारी राजनीतिक विचारधारा को केंद्र में रखा। कालांतर में इसके विभिन्न संगठनों का विस्तार अन्य राज्यों में हुआ तथा वर्ष 2004 में “भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) की स्थापना एक महत्वपूर्ण संगठनात्मक परिवर्तन के रूप में सामने आई।”¹

भारत सरकार ने नक्सलवाद से निपटने के लिए सुरक्षा अभियानों, विकासात्मक योजनाओं, बुनियादी सुविधाओं के विस्तार तथा आत्मसमर्पण एवं पुनर्वास से संबंधित विभिन्न नीतियों को अपनाया है। वर्ष 2015 की राष्ट्रीय नीति एवं कार्ययोजना ने इन उपायों को एक समन्वित प्रशासनिक ढाँचे में प्रस्तुत किया। वर्तमान परिस्थितियों में नक्सलवादी हिंसा के घटते आँकड़ों के साथ आदिवासी समुदायों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति तथा प्रशासनिक व्यवस्थाओं का मूल्यांकन करना आवश्यक है। प्रस्तुत अध्ययन नक्सलवाद के ऐतिहासिक विकास से लेकर सितंबर 2026 तक उपलब्ध तथ्यों के आधार पर इसके बदलते स्वरूप और आंतरिक सुरक्षा से संबंधित प्रश्नों की विवेचना करता है।

1. नक्सलवाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं संगठनात्मक परिवर्तन: नक्सलवादी आंदोलन की ऐतिहासिक जड़ें स्वतंत्रता के बाद भूमि सुधारों और कृषक अधिकारों से संबंधित संघर्षों में दिखाई देती हैं। प्रारंभिक आंदोलन में भूमिहीन किसानों, कृषि मजदूरों तथा स्थानीय राजनीतिक कार्यकर्ताओं की भागीदारी रही। समय के साथ आंदोलन विभिन्न संगठनों और वैचारिक धाराओं में विभाजित हुआ।

मानवशास्त्री अल्पा शाह ने अपने ग्रंथ Nightmarch में नक्सलवादी आंदोलन के वैचारिक नेतृत्व, आदिवासी समुदायों की भागीदारी और स्थानीय सामाजिक संबंधों का अध्ययन किया है। उनके अनुसार “आंदोलन की संगठनात्मक संरचना और आदिवासी सदस्यों की सामाजिक अपेक्षाओं को एक समान मानना उचित नहीं है।”²

वर्ष 2004 में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) की स्थापना के बाद विभिन्न माओवादी संगठनों के बीच एक नया संगठनात्मक समन्वय विकसित हुआ। आंदोलन का प्रभाव छत्तीसगढ़, झारखंड, ओडिशा तथा आसपास के वन और ग्रामीण क्षेत्रों में केंद्रित रहा। वर्तमान दौर में इसके संगठनात्मक स्वरूप में महत्वपूर्ण परिवर्तन दिखाई देता है। नेतृत्व की हानि, आत्मसमर्पण, गिरफ्तारियों और सुरक्षा अभियानों के परिणामस्वरूप सशस्त्र संगठनात्मक गतिविधियों में कमी दर्ज की गई है। तथापि, नक्सलवाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अध्ययन यह दर्शाता है कि सामाजिक असंतोष, राजनीतिक विचारधारा और हिंसात्मक संगठनात्मक गतिविधियाँ परस्पर संबंधित होते हुए भी अलग-अलग विश्लेषणात्मक विषय हैं।

2. आदिवासी क्षेत्रों की सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियाँ और नक्सलवाद: नक्सलवादी आंदोलन के विस्तार में आदिवासी क्षेत्रों की सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। ऐतिहासिक रूप से अनेक आदिवासी समुदाय भूमि, वन, जलस्रोत तथा सामुदायिक प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर रहे हैं। औद्योगिकीकरण, खनन परियोजनाओं और भूमि अधिग्रहण ने कुछ क्षेत्रों में पारंपरिक आजीविका तथा संसाधनों के अधिकार से संबंधित विवाद उत्पन्न किए। भारत सरकार के योजना आयोग द्वारा वर्ष 2008 में प्रकाशित विशेषज्ञ समूह की रिपोर्ट में “भूमि से बेदखली, विस्थापन, ऋणग्रस्तता, प्राकृतिक



Kavya Setu

A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal

Impact Factor: 6.4

ISSN No: 3049-4176

संसाधनों पर अधिकारों की अनिश्चितता और प्रशासनिक उपेक्षा को उग्रवाद प्रभावित क्षेत्रों में असंतोष के महत्वपूर्ण कारणों के रूप में पहचाना गया था।³

इस परिप्रेक्ष्य में आदिवासी समुदायों और माओवादी संगठनों के बीच अंतर करना आवश्यक है। समस्त आदिवासी आबादी को नक्सलवादी गतिविधियों से जोड़ना तथ्यात्मक रूप से अनुचित है। अनेक स्थानीय समुदायों को माओवादी हिंसा, सुरक्षा संबंधी प्रतिबंधों और अन्य संघर्षजनित परिस्थितियों का सामना करना पड़ा है। आदिवासी क्षेत्रों की समस्याओं का अध्ययन केवल आर्थिक निर्धनता तक सीमित नहीं रखा जा सकता। सांस्कृतिक पहचान, सामुदायिक निर्णय प्रक्रिया, परंपरागत अधिकार तथा स्थानीय प्रशासन के प्रति विश्वास भी महत्वपूर्ण हैं। इसलिए सामाजिक-आर्थिक वंचना और हिंसात्मक राजनीतिक गतिविधियों के बीच किसी एक सार्वभौमिक कारण-परिणाम संबंध को स्थापित करना उचित नहीं होगा।

3. नक्सलवादी हिंसा का बदलता भौगोलिक स्वरूप: नक्सलवाद के समकालीन स्वरूप में सबसे स्पष्ट परिवर्तन इसकी हिंसात्मक घटनाओं तथा भौगोलिक विस्तार में कमी है। गृह मंत्रालय और संसदीय विश्लेषण के उपलब्ध आँकड़ों से यह परिवर्तन स्पष्ट होता है। "वर्ष 2010 में वामपंथी उग्रवाद से संबंधित 1,936 घटनाएँ दर्ज की गई थीं, जबकि वर्ष 2025 में यह संख्या घटकर 234 रह गई। इसी अवधि में नागरिकों और सुरक्षाकर्मियों की मृत्यु के मामलों में भी उल्लेखनीय कमी दर्ज की गई।"⁴ गृह मंत्रालय की जुलाई 2026 की संसदीय जानकारी के अनुसार, उस समय कोई भी जिला नक्सल प्रभावित श्रेणी में नहीं रखा गया था। हालाँकि, "37 जिलों को पूर्व प्रभाव वाले तथा विशेष ध्यान की आवश्यकता वाले क्षेत्रों के रूप में वर्गीकृत किया गया था। इसी आधिकारिक विवरण में 21 जुलाई 2026 तक माओवादी हिंसा की 33 घटनाएँ दर्ज थीं।"⁵

यह अंतर विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। किसी जिले का नक्सल प्रभावित प्रशासनिक श्रेणी से बाहर होना, हिंसात्मक गतिविधियों का पूर्णतः समाप्त हो जाना या पूर्ववर्ती सामाजिक-आर्थिक समस्याओं का समाधान हो जाना तीनों अलग-अलग स्थितियाँ हैं। इसलिए नक्सलवाद के वर्तमान स्वरूप का मूल्यांकन करते समय आधिकारिक वर्गीकरण, हिंसा की घटनाओं और स्थानीय समुदायों की वास्तविक परिस्थितियों का स्वतंत्र अध्ययन आवश्यक है।

4. भूमि अधिकार, वन अधिकार और स्थानीय स्वशासन: आदिवासी क्षेत्रों में भूमि एवं वन संसाधनों के अधिकार नक्सलवाद से संबंधित सामाजिक-आर्थिक विमर्श का प्रमुख पक्ष रहे हैं। इन अधिकारों के संरक्षण के लिए संवैधानिक और विधिक व्यवस्थाएँ विकसित की गई हैं। पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) अधिनियम, 1996 अर्थात् पेसा, अनुसूचित क्षेत्रों में ग्रामसभाओं की भूमिका और स्थानीय स्वशासन को मान्यता देता है। इसके अंतर्गत "सामुदायिक संसाधनों, स्थानीय परंपराओं तथा विकासात्मक निर्णयों में ग्रामसभा की सहभागिता को महत्व दिया गया है।"⁶ इसी प्रकार वन अधिकार अधिनियम, 2006 वनवासी अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य पात्र परंपरागत वनवासियों के व्यक्तिगत और सामुदायिक अधिकारों को मान्यता प्रदान करता है। इसका उद्देश्य "ऐतिहासिक अन्याय का निवारण करना तथा आजीविका और वन संरक्षण में स्थानीय समुदायों की भूमिका को सुदृढ़ बनाना है।"⁷



Kavya Setu

A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal

Impact Factor: 6.4

ISSN No: 3049-4176

वन अधिकारों के वास्तविक क्रियान्वयन का मूल्यांकन भी महत्वपूर्ण है। जनजातीय कार्य मंत्रालय की फरवरी 2025 तक की रिपोर्ट के अनुसार, “देश में लगभग 51.05 लाख वन अधिकार दावे प्रस्तुत किए गए थे और लगभग 25.03 लाख अधिकार-पत्र वितरित किए गए थे।”⁸ हालाँकि, अधिकार-पत्रों की संख्या से ही सामुदायिक अधिकारों की गुणवत्ता, दावों के निस्तारण की निष्पक्षता अथवा ग्रामसभा की वास्तविक निर्णय क्षमता निर्धारित नहीं होती। इसके लिए राज्यवार तथा क्षेत्रीय स्तर पर विस्तृत अध्ययन आवश्यक है।

5. विकासात्मक योजनाएँ और नक्सल प्रभावित क्षेत्रों का सामाजिक परिवर्तन: भारत सरकार ने नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में विकासात्मक सुविधाओं के विस्तार को अपनी समन्वित नीति का एक प्रमुख घटक बनाया है। सड़क संपर्क, दूरसंचार, शिक्षा, कौशल विकास, बैंकिंग तथा स्वास्थ्य सुविधाओं का विस्तार इस नीति के महत्वपूर्ण पक्ष हैं। जुलाई 2026 की आधिकारिक जानकारी के अनुसार, “पूर्व नक्सल प्रभावित क्षेत्रों के लिए निर्धारित योजनाओं के अंतर्गत 15,189 किलोमीटर सड़कों का निर्माण किया गया था। इसके अतिरिक्त 9,497 दूरसंचार टावर स्थापित किए गए तथा 179 एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय क्रियाशील बनाए गए थे।”⁹

इन योजनाओं से दुर्गम क्षेत्रों में प्रशासनिक पहुँच, परिवहन और सार्वजनिक सेवाओं की उपलब्धता बढ़ने की संभावनाएँ उत्पन्न हुई हैं। तथापि, भौतिक आधारभूत सुविधाओं का विस्तार और समावेशी विकास समानार्थी नहीं हैं। किसी क्षेत्र में सड़क अथवा विद्यालय की उपलब्धता के साथ उनकी वास्तविक उपयोगिता, स्थानीय समुदायों की सहभागिता, नियमित सेवाओं और सामाजिक समानता का मूल्यांकन आवश्यक है। इसी प्रकार खनिज संपदा के दोहन और औद्योगिक विकास से उत्पन्न आर्थिक लाभों का स्थानीय आबादी तक पहुँचना भी महत्वपूर्ण है। इस प्रकार नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में विकास का अध्ययन केवल निर्माण कार्यों के आँकड़ों पर आधारित न होकर मानव विकास, आजीविका और सामाजिक अधिकारों के व्यापक संकेतकों पर आधारित होना चाहिए।

6. आंतरिक सुरक्षा, मानवाधिकार और प्रशासनिक उत्तरदायित्व: नक्सलवादी हिंसा ने भारत की आंतरिक सुरक्षा के समक्ष दीर्घकालीन चुनौतियाँ उत्पन्न की हैं। नागरिकों और सुरक्षाकर्मियों पर हिंसात्मक हमलों के अतिरिक्त संघर्ष प्रभावित क्षेत्रों में सार्वजनिक सेवाओं, आवागमन और सामान्य सामाजिक जीवन पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। हालाँकि, आंतरिक सुरक्षा से संबंधित सरकारी कार्रवाइयों के साथ मानवाधिकार संरक्षण का प्रश्न भी जुड़ा हुआ है। “छत्तीसगढ़ में सलवा जुद्ध से संबंधित आरोपों की जाँच के लिए राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ने सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश पर एक तथ्यान्वेषण समिति गठित की थी। समिति ने दंतेवाड़ा और बीजापुर के राहत शिविरों तथा अनेक गाँवों का दौरा किया।”¹⁰ इस ऐतिहासिक उदाहरण से स्पष्ट होता है कि हिंसात्मक संघर्ष के दौरान नागरिक अधिकारों, विस्थापन, न्यायिक निगरानी और प्रशासनिक उत्तरदायित्व का अध्ययन आवश्यक है। गृह मंत्रालय के अनुसार, “वर्ष 2015 की राष्ट्रीय नीति एवं कार्ययोजना में सुरक्षा उपायों, विकासात्मक हस्तक्षेप तथा स्थानीय समुदायों के अधिकारों को एक समन्वित ढाँचे में सम्मिलित किया गया है।”¹¹ इस नीति के प्रभाव का मूल्यांकन



Kavya Setu

A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal

Impact Factor: 6.4

ISSN No: 3049-4176

करते समय हिंसा में कमी के साथ नागरिकों की सुरक्षा, विधिक प्रक्रियाओं की पारदर्शिता तथा प्रभावित समुदायों के प्रशासनिक संस्थाओं पर विश्वास को भी ध्यान में रखना आवश्यक है।

7. आत्मसमर्पण, पुनर्वास और दीर्घकालीन शांति की चुनौतियाँ: नक्सलवादी संगठनों की गतिविधियों में कमी के साथ आत्मसमर्पण और पुनर्वास का प्रश्न अधिक महत्वपूर्ण हुआ है। पुनर्वास का उद्देश्य पूर्व संगठनात्मक सदस्यों को सामान्य सामाजिक जीवन में पुनः शामिल करना तथा उनके लिए वैकल्पिक आजीविका की परिस्थितियाँ विकसित करना है। गृह मंत्रालय की जुलाई 2026 की संसदीय जानकारी के अनुसार, "केंद्र सरकार सुरक्षा संबंधी व्यय योजना के अंतर्गत राज्यों की आत्मसमर्पण एवं पुनर्वास व्यवस्थाओं को वित्तीय सहायता प्रदान करती है। इस व्यवस्था में आर्थिक सहायता, व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा आजीविका से संबंधित प्रावधान सम्मिलित हैं।"¹² हालाँकि, पुनर्वास कार्यक्रमों की वास्तविक परिणामकारकता का मूल्यांकन केवल आत्मसमर्पण की संख्या से नहीं किया जा सकता। इसके लिए पुनर्वासित व्यक्तियों की आर्थिक स्थिति, सामाजिक स्वीकार्यता, शिक्षा, रोजगार तथा स्थानीय समुदायों के साथ संबंधों का अध्ययन आवश्यक है।

"वर्ष 2008 के विशेषज्ञ समूह की रिपोर्ट में सामाजिक न्याय, स्थानीय संसाधनों पर अधिकार और सहभागी प्रशासन को दीर्घकालीन शांति से संबंधित महत्वपूर्ण प्रश्नों के रूप में प्रस्तुत किया गया था।"¹³ समकालीन परिस्थितियों में इन प्रश्नों की प्रासंगिकता बनी हुई है। हिंसात्मक गतिविधियों में कमी से विकासात्मक और प्रशासनिक कार्यों के विस्तार की परिस्थितियाँ बनती हैं। किंतु स्थायी सामाजिक शांति का आकलन स्थानीय समुदायों की वास्तविक भागीदारी, संवैधानिक अधिकारों की उपलब्धता तथा पुनर्वास की दीर्घकालीन स्थितियों के आधार पर ही संभव है।

निष्कर्ष

भारत में नक्सलवाद के बदलते स्वरूप का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि इसका ऐतिहासिक विकास सामाजिक-आर्थिक असमानताओं, भूमि-संबंधी समस्याओं, आदिवासी क्षेत्रों की परिस्थितियों तथा क्रांतिकारी राजनीतिक विचारधारा से संबंधित रहा है। इसके संगठनात्मक विस्तार और हिंसात्मक गतिविधियों ने अनेक राज्यों की आंतरिक सुरक्षा तथा स्थानीय सामाजिक जीवन को प्रभावित किया। प्रस्तुत अध्ययन से तीन प्रमुख निष्कर्ष सामने आते हैं। प्रथम, वर्ष 2010 के बाद नक्सलवादी हिंसा और उसके भौगोलिक विस्तार में उल्लेखनीय कमी दर्ज की गई है। द्वितीय, आदिवासी क्षेत्रों में विकासात्मक योजनाओं तथा सुरक्षा व्यवस्था का विस्तार हुआ है, लेकिन इन उपलब्धियों के व्यापक सामाजिक परिणामों का स्वतंत्र मूल्यांकन आवश्यक है। तृतीय, भूमि एवं वन अधिकार, स्थानीय स्वशासन और पुनर्वास से संबंधित प्रश्न हिंसा में कमी आने के बाद भी प्रासंगिक बने हुए हैं।

जुलाई 2026 के सरकारी आँकड़े हिंसात्मक गतिविधियों में गिरावट दर्शाते हैं। तथापि, किसी भी जिले को नक्सल प्रभावित श्रेणी में न रखे जाने को सामाजिक असंतोष अथवा हिंसा की प्रत्येक संभावना के समाप्त होने के प्रमाण के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। अध्ययन की प्रमुख सीमा यह है कि इसका आधार प्रकाशित दस्तावेज और द्वितीयक सामग्री हैं। आदिवासी समुदायों, पुनर्वासित व्यक्तियों और स्थानीय प्रशासन के अनुभवों पर आधारित स्वतंत्र क्षेत्रीय अनुसंधान इसके निष्कर्षों को अधिक व्यापक



Kavya Setu

A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal

Impact Factor: 6.4

ISSN No: 3049-4176

बना सकता है। अतः नक्सलवाद का समकालीन अध्ययन आंतरिक सुरक्षा, संवैधानिक अधिकार, स्थानीय विकास, प्रशासनिक उत्तरदायित्व और सामाजिक न्याय के परस्पर संबंधों को समझने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है।

संदर्भ सूची:

1. मुखर्जी कल्याण एवं यादव, राजेन्द्र सिंह, भोजपुर : बिहार में नक्सलवादी आंदोलन, अनुवादक आनंद स्वरूप वर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. क्र. 108.
2. सिंह राकेश कुमार, नक्सलवाद और पुलिस की भूमिका, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2012, पृ. क्र. 71.
3. मिश्रा भास्कर, नक्सलवाद : समस्या एवं समाधान, राज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृ. क्र. 52.
4. पाण्डेय अनिल कुमार, आदिवासी समाज एवं नक्सलवाद, राज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृ. क्र. 25.
5. राजेश सुशील, नक्सली आतंकवाद, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013, पृ. क्र. 13.
6. रॉय अरुंधति, आहत देश, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012, पृ. क्र. 18.
7. टाइलर मेरी, भारतीय जेलों में पाँच साल, अनुवादक आनंद स्वरूप वर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2025, पृ. क्र. 81.
8. लोहिया राममनोहर, समता और सम्पन्नता, संपादक ओंकार शरद, लोकभारती प्रकाशन, 1992, पृ. क्र. 92
9. योजना आयोग, भारत सरकार, उग्रवाद प्रभावित क्षेत्रों में विकास संबंधी चुनौतियाँ : विशेषज्ञ समूह की रिपोर्ट, नई दिल्ली, अप्रैल 2008, पृ. क्र. 29
10. भारत सरकार, पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) अधिनियम, 1996, पंचायती राज मंत्रालय, नई दिल्ली.
11. जनजातीय कार्य मंत्रालय, भारत सरकार, अनुसूचित जनजाति और अन्य परंपरागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006, नई दिल्ली.
12. जनजातीय कार्य मंत्रालय, भारत सरकार, वन अधिकार अधिनियम, 2006 की कार्यान्वयन स्थिति : फरवरी 2025 की मासिक प्रगति रिपोर्ट, नई दिल्ली, 2025.
13. गृह मंत्रालय, भारत सरकार, वामपंथी उग्रवाद प्रभाग : राष्ट्रीय नीति, सुरक्षा और विकासात्मक योजनाएँ, नई दिल्ली.